Emperor Journal of Education

ISSN: 2583-0627 **Mayas Publication®** **www.mayas.info**

Volume-V **Issue-XI** **November 2025**

जनमेजय का सर्प-सत्र महाभारत की दार्शनिक चेतना और मुग़लकालीन चित्रण पर एक दृश्य-मानवीय अध्ययन

Pradeep Saini
Research Scholar,
College of Fine Arts,
Teerthanker Mahaveer University,
Moradabad

Dr. Farha Deeba
Associate Professor,
College of Fine Arts,
Teerthanker Mahaveer University,
Moradabad

सारांश

महाभारत के आदिपर्व में वर्णित सर्प-सत्र एक ऐसा प्रसंग है जो प्रतिशोध, धर्म और करुणा के मध्य संघर्ष का प्रतीक है। राजा जनमेजय द्वारा सम्पूर्ण नाग-वंश के विनाश हेतु किया गया यह यज्ञ केवल धार्मिक अनुष्ठान नहीं, बल्कि मानवीय सीमाओं की परीक्षा भी है। यह शोध-पत्र इस प्रसंग को मुग़लकालीन दृश्य-परंपरा में प्रस्तुत दो लघुचित्रों के माध्यम से समझने का प्रयास करता है। दोनों चित्र, जो सम्भवत: अकबरकालीन रज्म्नमा पाण्डुलिपि से संबंधित हैं, वैदिक आख्यान और फ़ारसी सौंदर्यबोध के सम्मिलन को दर्शाते हैं। शोध का उद्देश्य इन चित्रों में छिपे धार्मिक, नैतिक और कलात्मक अर्थों को मानव-केंद्रित दृष्टि से पुनर्परिभाषित करना है।

इस अध्ययन में दृश्य-संरचना, रंग-संयोजन, प्रतीकवाद और मानवीय भावनाओं की अभिव्यक्ति का विश्लेषण किया गया है। परिणामतः यह स्पष्ट होता

है कि ये चित्र न केवल पौराणिक कथा का रूपांतरण हैं, बल्कि "धर्म बनाम दया" की बहस का दृश्य-प्रलेख भी हैं।

मुख्य शब्द:

महाभारत, सर्प-सत्र, जनमेजय, आस्तिक, मुग़ल चित्रकला, रज्म्नमा, धर्म, करुणा, यज्ञ, प्रतीकवाद

Objectives (उद्देश्य):

1. महाभारत के सर्प-सत्र प्रसंग के नैतिक और दार्शनिक आयामों का अध्ययन करना।
2. मुग़लकालीन रज्म्नमा चित्रों के माध्यम से इस प्रसंग की दृश्यात्मक व्याख्या प्रस्तुत करना।
3. चित्रों में प्रयुक्त रंग, रूप, मुद्रा और प्रतीकों के माध्यम से उस समय की धार्मिक संवेदना को समझना।
4. यज्ञ और प्रतिशोध की अवधारणाओं के माध्यम से "धर्म के मानवीकरण" का विश्लेषण करना।

मुख्य चर्चा (Main Discussion):

जनमेजय का यज्ञ: प्रतिशोध से धर्म तक की यात्रा

राजा जनमेजय का सर्प-सत्र, उनके पिता परीक्षित के नाग-राज तक्षक द्वारा वध के प्रतिशोध से प्रारंभ होता है। यह घटना मनुष्य के भीतर बसे प्रतिशोध और न्याय के संघर्ष को उजागर करती है। महाभारत यहाँ यह प्रश्न उठाता है कि क्या धर्म कभी हिंसा का औचित्य बन सकता है? सर्प-सत्र एक रूपक बन जाता है जहाँ यज्ञ की अग्नि केवल सर्पों को नहीं, बल्कि करुणा और विवेक को भी भस्म करने लगती है।

1. पहली पेंटिंग का दृश्यार्थ: "अहं और आरंभ का क्षण"

पहले चित्र में राजा जनमेजय एक ऊँचे मंच पर बैठे हैं यह ऊँचाई उनके राजसत्ता और अहंकार का प्रतीक है। नीचे बैठे ब्राह्मण और ऋषि धर्म का आधार हैं, जो यज्ञ की औचित्य पर प्रश्न नहीं उठाते, केवल उसका पालन करते हैं। पृष्ठभूमि की हरियाली और फूल इस बात का प्रतीक हैं कि प्रकृति अभी शांत है; वह केवल साक्षी है। यह चित्र हमें उस क्षण में ले जाता है जहाँ प्रतिशोध धर्म के रूप में स्वीकृत हो चुका है, परंतु विवेक अब भी मौन है।

परीक्षित एक स्तंभ के ऊपर बने महल में शरण लेते हैं
फोलियो 12r, 33.2 x 21.7 सेमी

अभिमन्यु और उत्तरा के पुत्र परीक्षित जब जंगल में शिकार कर रहे थे तो एक हिरण का पीछा करते हुए रास्ता भटक गए। उनके तीर से हिरण घायल हो गया। अंततः वे स्वयं को समीक नामक मुनि के आश्रम में पाते हैं और परीक्षित उनसे पूछते हैं कि क्या उन्होंने हिरण को देखा है। मौन व्रत धारण किए हुए मुनि कोई उत्तर नहीं देते। यह सुनकर परीक्षित अपना आपा खो बैठते हैं और मुनि के गले में एक मरा हुआ सर्प डालकर उनका अपमान करते हैं। जब मुनि के पुत्र श्रृंगी दिन के अंत में लौटते हैं और अपने पिता का अपमान होते देखते हैं तो वे परीक्षित को श्राप देते हैं कि अगले सात रात्रियों में सर्पराज तक्षक के घातक दंश से उनकी मृत्यु हो जाएगी। श्राप से बचने के लिए परीक्षित एक ऊंचे स्तंभ के ऊपर बने महल में चिकित्सकों और विद्वान ब्राह्मणों से घिरे हुए शरण लेते हैं। लेकिन तक्षक एक छोटे से कीड़े का रूप धारण कर एक फल में छिप जाता है और महल में प्रवेश करने में सफल हो जाता है। सही समय पर मौका पाकर वह अपना असली रूप धारण कर लेता है और परीक्षित को काट लेता है, जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है।

नीचे एक पंक्ति के पाठ के एक संकीर्ण पैनल के साथ पूर्ण-पृष्ठीय चित्र में राजा को अद्वितीय स्तंभ महल में सिंहासनारूढ़ दिखाया गया है, जहाँ सर्पराज तक्षक उनकी गर्दन काट रहा है, जबकि एकत्रित ब्राह्मण और वैद्य भयभीत होकर अलग-अलग दिशाओं में पीछे हट रहे हैं। इसमें कथा का एक और विवरण भी दिखाया गया है, जहाँ परीक्षित की रक्षा के लिए जा रहे कश्यप मुनि, तक्षक से मिलते हैं और उसे चुनौती देते हैं। फिर सर्प अपने विषैले दंश से एक वृक्ष को जला देता है, लेकिन मुनि उसे पुनर्जीवित कर देते हैं। यह चित्र के निचले बाएँ भाग में दिखाया गया है।

इस पेंटिंग की एक हूबहू प्रतिकृति, एक अलग रंग योजना में, 16 अप्रैल, 1984 को सोथबी में बिक्री के लिए रखी गई थी (लॉट 22)। इस प्रतिकृति में महल की संरचना के कुछ सजावटी विवरण और पाठ्य पंक्तियाँ गायब हैं। लेकिन यह ज्ञात नहीं है कि यह प्रतिकृति और तीन अन्य प्रतिकृतियाँ कहाँ हैं।

2. दूसरी पेंटिंग का दृश्यार्थ: "विनाश की ज्योति"

दूसरे चित्र में यज्ञ पूर्ण गति पर है। सर्प अग्निकुण्ड में गिर रहे हैं, और आकाश भयावह ऊर्जा से भर उठा है। चित्रकार ने पीले और लाल रंगों से न केवल यज्ञ की तीव्रता, बल्कि नैतिक असंतुलन को भी व्यक्त किया है। जनमेजय का भयभीत चेहरा, ब्राह्मणों की एकाग्र मुद्रा, और ऊपर उड़ते सर्प तीनों मिलकर यह संकेत देते हैं कि यज्ञ अब धर्म नहीं रहा, वह विनाश का माध्यम बन गया है।सर्प यहाँ केवल जीव नहीं, बल्कि "जीवन के संरक्षण" का प्रतीक हैं जिनकी आहुति देकर मनुष्य अपने ही अस्तित्व को चुनौती देता है।

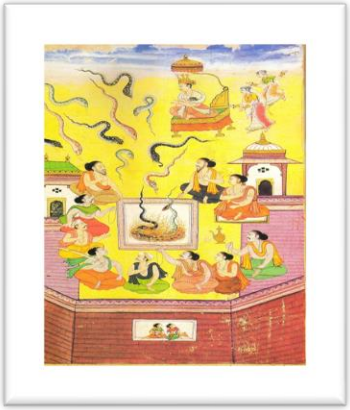

सर्प-यज्ञ: जनमेजय का सर्प यज्ञ

फोलियो 15r, 28.8 x 18 सेमी

जब जनमेजय को पता चलता है कि उनके पिता परीक्षित की मृत्यु एक साँप ने कर दी है, तो वे पृथ्वी के सभी साँपों का नाश करके बदला लेना चाहते हैं। उनके मंत्री और पुरोहित उन्हें सर्प यज्ञ करने की सलाह देते हैं जिससे संसार के सभी साँपों का नाश हो जाएगा।

यज्ञ की भव्य तैयारियाँ चल रही थीं, तभी एक वाचक ने राजा को चेतावनी दी कि एक ब्राह्मण अचानक यज्ञ रोक देगा। इसी बीच, जैसे ही यज्ञ शुरू हुआ, हर आकार, रंग और आकृति के साँप, हानिरहित और घातक, यज्ञ की चिता में प्रकट होकर मरने लगे। केवल साँपों का राजा, तक्षक, इंद्र के दरबार में शरण लेकर जीवित बच गया।

यह उल्लेखनीय रचना उस नाटकीय क्षण को दर्शाती है जब विभिन्न प्रकार के विशालकाय सांप - जिनमें से कुछ के सिर हाथी, घोड़े और अजगर के हैं - हर दिशा से आते हैं और आग में भस्म हो जाते हैं। पुजारी और पाठक - उनकी संख्या दस तक है - महल के चारदीवारी वाले परिसर के भीतर चौकोर वेदी के चारों ओर बैठते हैं। रचना के ऊपरी भाग में इंद्र एक सिंहासन पर विराजमान हैं जो हवा में तैरता हुआ प्रतीत होता है। हालांकि इंद्र को चिह्नित करने के लिए कोई विशिष्ट प्रतीकात्मक प्रतीक नहीं है, उनकी पहचान उनके बाएं बगल से निकले तक्षक के सिर और उनके पीछे दो दिव्य नर्तकियों से स्पष्ट है। विचित्र रूप से, जनमेजय की पहचान एक रहस्य बनी हुई है। लेकिन वह संभवतः बीच में बैठा युवक है क्योंकि वह एकमात्र व्यक्ति है जो चटाई पर बैठा है। एक असामान्य विवरण महल में खिड़की जैसा उद्घाटन है

कलाकार ने वास्तुकला के भूरे, बैंगनी और बैंगनी रंगों को रेत के रंग की पृष्ठभूमि के साथ संयोजित किया है, जो बलि के गड्ढे की ओर दौड़ते हुए साँपों को उजागर करता है।

कलात्मक विश्लेषण: मुग़ल शैली में वैदिक कथा का रूपांतरण

इन दोनों चित्रों में मुग़ल कलाकारों ने भारतीय आख्यान को फ़ारसी चित्रशैली की नज़ाकत के साथ रूपायित किया है। रंगों की चमक, रेखाओं की लय, और वास्तुशिल्पीय मंचन मुग़ल सौंदर्यबोध को दर्शाते हैं, जबकि पात्रों की मुद्राएँ भारतीय भावनात्मक परंपरा से जुड़ी हैं।
यह सांस्कृतिक समन्वय "रज्म्नमा" परियोजना के उद्देश्य को पूरा करता है धार्मिक संवाद को दृश्य माध्यम से जीवित करना।

मानवीय दृष्टि से सर्प-सत्र का अर्थ

यदि इसे केवल धार्मिक प्रसंग मान लिया जाए, तो इसका गूढ़ अर्थ खो जाता है।

दरअसल यह कथा हमें यह सिखाती है कि जब मनुष्य प्रतिशोध को धर्म का रूप देता है, तो उसका यज्ञ स्वयं विनाश का कारण बनता है। आस्तिक का आगमन बाद में इसी करुणा की पुनर्स्थापना का प्रतीक है — जहाँ धर्म पुनः मानवता के पक्ष में खड़ा होता है।

Methodology (कार्यविधि):

यह अध्ययन गुणात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। पाठ्य विश्लेषण और दृश्य व्याख्या के संयोजन से, महाभारत के आस्तिक पर्व की कथा को मुगल

चित्रकलाओं से जोड़ा गया है। प्राथमिक स्रोत के.एम. गांगुली का अंग्रेजी अनुवाद और बीओआरआई क्रिटिकल संस्करण हैं, जबकि द्वितीयक स्रोतों में मिलो सी. बीच, आनंद कुमारस्वामी और अशोक कुमार दास जैसे विद्वानों द्वारा कला वैज्ञानिक व्याख्याएँ शामिल हैं। चित्रकलाओं की मानवीय गहराई को समझने के लिए सौंदर्यबोध और लाक्षणिक दृष्टिकोण से उनकी जाँच की गई है।

II.CONCLUSION

सर्प-सत्र का प्रसंग केवल पौराणिक कथा नहीं, बल्कि मानव मन की जटिलताओं का दृश्य-दर्शन है।

मुग़ल चित्रकारों ने इसे जिस संवेदनशीलता से चित्रित किया, वह भारतीय चिंतन में "धर्म का मानवीकरण" कहलाता है जहाँ न्याय से अधिक दया का मूल्य है।

इन चित्रों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि कला केवल सौंदर्य नहीं, बल्कि नैतिक साक्षात्कार का माध्यम भी बन सकती है।

III.REFERENCES

1. Ganguli, K. M. (Trans.). (1883–1896). *The Mahabharata of Krishna-Dwaipayana Vyasa*. P. C. Roy.
2. Debroy, B. (2010). *The Mahabharata: Vol. 1 (Adi Parva)*. Penguin Books.
3. Beach, M. C. (1987). *The imperial image: Paintings for the Mughal court*. Freer Gallery of Art.
4. Das, A. K. (1980). *The art of the book in India*. National Museum.
5. Coomaraswamy, A. K. (1934). *The transformation of nature in art*. Harvard University Press.
6. Das, A. K. (2005). *Paintings of Razmnama: In the Birla Academy of Art & Culture, Kolkata: The book of war*. Grantha Corporation; Mapin Publishing.